

अर्चना वर्मा की कुछ कवितायें

दिनचर्या

आज उसने फिर एक कविता उमेठ कर
अंगीठी में लगायी
और चाय का पानी चढ़ाया
अपने संगीत की छौंक में
सब्जी पकाई और पछताई
कि खाने में खुचबू
ठीक वही क्यों नहीं है
जो तुम्हारी माँ के हाथ में थी।

आज उसने फिर
तुम्हारा जूता चमकाया
तुम्हारे दुर्भाग्य का जिम्मेदार
खुद को ठहराया

आज उसने फिर
तुम्हारी इजाजत से सांस ली
और इजाजत नहीं थी
इसलिये बेइज्जत वापस लौटा दिया
पूरा एक संसार
द्वार बंद कर लिया।

आज उसने फिर
चाय नहीं पी, राय नहीं दी
हांफते हड़बड़ाते
घर से दफ़तर और
दफ़तर से घर का
चक्कर लगाया।
रास्ते में कहीं
नज़र नहीं उठाई
भीड़ भरी सड़क पर
बेबस बिलखते लापता बच्चे को
बिलखता ही छोड़ दिया
हद में रही
इस कदर फ़ालतू और लावारिस
नहीं है उसका प्यार
अगर एक समुद्र उसके भीतर

है तो हुआ करे।
उठा फिर बैठ गया
करुणा का ज्वार
समुद्र को भी कहां है इजाजत
हद से गुजरने की।
एक एक बूंद पर दावा है
एक एक कोने पर दखल है
आस पास मौजूद हैं
असली हकदार

साध्वी सुहागन का
तमगा संभाला
गुस्से को पिया
और धक्कों को खाया
बदतमीज़ नज़रों
और बेबाक फिकरों से
बचती, बचाती
खीझी और खिसियाई
दालों मसालों के पैकेट
सब्जी के थैलों से
लदी फंदी
घर आई
आज उसने फिर
आज़ादी की कीमत चुकाई
और कृतज्ञ हुई

आज उसने फिर
तुम्हारे गलत को गलत
नहीं कहा
बच्चे को बेबात पड़ा थप्पड़
अपने गाल पर सहा
औरतों की बेअक्ली पर
तुम्हारा लतीफ़ा सुना
और न सुनने का
बहाना किया बल्कि
खुद ही जुटा दिये
अपनी बेवकूफी के सबूत



और तुम्हारे दंभ को
सहलाया
आज उसने फिर
तुम्हारे बेबस बड़प्पन पर
तरस खाया।
आज भी उसने
थकी हारी देह को
स्वागत में सजाया
आज भी
इस दैनिक धिक्कार पर
कर्तव्य और अधिकार
और प्यार का
ठप्पा लगाया।
फिर एक बार बचाया
भूकंप से अपना संसार।
आज भी उसने नहीं पूछा
आखिर कहां है अन्त
और सुहाग के अभिमान से
भर आई।
फिर एक कविता
सुबह की अंगीठी के लिए
उमेठने से पहले
बच्चे को
लोरी सुनाई।

Some Poems by Archana Varma

(translated from Hindi by Ruth Vanita)



The day's routine

*Today, once again,
she crumpled a poem,
lit the fire with it,
and put up the water for tea;
with the spice of her song,
cooked the meat, regretting
that the food lacked the flavour
your mother gave it.*

*Today, once again,
she polished your shoes;
held herself to blame
for all your misfortunes.
Today, once again,
she drew breath by your leave
and, since it was forbidden,
humiliated she gave up
a whole world -
shut the door on it.*

*Today, once again,
she drank no tea, gave no opinion,
but, panting and puffing,
made the rounds -
home to office,
office to home,
never raising her eyes
on the way.*

*She left a helpless, crying, lost child
on the crowded street, crying -
she stayed within the bounds.*

*After all, her love is no free,
no unclaimed thing -
What though on ocean
is swelling in her?*

*The tides of compassion
rose, then ebb,
Must not even the ocean
stay within bounds?*

*Each drop is claimed
each corner is owned -
all around, everpresent,
are the real claimants.*

*Clinging to the badge
of chaste wifhood,
she swallowed her anger,
bore the shoves,
the rude stares,
the unspoken comments.
Shrinking, cowering
irritated, exhausted,
laden with packets
of spices, lentils,
bags of vegetables,
she reached home.
Today, once again,
she paid freedom's price
and was grateful.*

*Today, once again,
your wrongdoing
she did not call wrong,
and felt on her cheek
the uncalled-for slap
given to the child,
heard your joke
about women's idiocy,*

*pretending not to hear it,
but then herself offered
proof of her own idiocy
to stroke
your ego.*

*Today, once again,
she pitied your
helpless greatness,
today, again made
her worn out body
ready in welcome.
Today, again,
this daily dishonour
she labelled duty, and rights,
and love:
yet again saved
from an earthquake
her world.*

*Today, again,
she refrained from asking,
where will this end?
and was filled with the pride
of being a wife.
Before crumpling a poem
for the morning stove,
she sang to the child
a lullaby.*

परमेश्वर

मौसम का हाल बताने वाला दफ़्तर
उसकी रफ़्तार
कितने मील प्रति घण्टा तय करता
कहना कठिन है।
सिर्फ़ एक खिड़की खुली रह गयी थी
परदों को झटक दरवाज़ों को पटक कर
तूफ़ान
भीतर फट पड़ा।
बन्द करने तक खिड़की
चौखटे समेत समूची
बाहर जा गिरी
फिर तो कोई रोक नहीं थी।
तस्वीरें, फूलदान, किताबें या टेबल-लैम्प
पहले क्या गिरा
और चूर-चूर हो गया, पता नहीं।
बरसों के जतन
एक घमासान की कहानी कह रहे थे
मैं पहचान की कोयिच में खड़ी थी
कभी कहीं कुछ था भी या नहीं

अगली सुबह
वह देर से उठा।
उसने चाय माँगी। उसी परमेचवराना
अन्दाज़ में।
उसे कोई अन्दाज़ न था कि
उसके संसार में आज सब कुछ सही
नहीं है
पिछली चीज़ों के पास पिछली-सी जगह
नहीं है
वह सिर्फ़ सो कर उठा था।

प्यार

वह एक जाल था
और मैं
जल नहीं थी
जो निकल भागती।

वह एक छल था
जो मैंने खुद से बचने के लिए
और बहुत-सी
मूर्तियों के साथ
अपने भीतर
गढ़ा था।

सुरक्षा

नन्हा-सा पौधा रोप कर
उसने गाड़ दी थी
कँटीली टहनियों की बाड़।

गलती पौधे की थी जो बड़ा हुआ।
न छेदते अगर काँटे तो
और क्या करते।



God

*It is hard to say
how the weather office
would have decided its speed,
at how many miles an hour.
Only one window remained open.
Wrenching the curtains,
banging the panes,
the storm
burst inside.
Before it could be closed
the whole window
with its frame
fell outside -
then there was nothing to stop it.
Pictures, flower vases,
books or the table lamp -
who knows
which fell first -
all were smashed.
The labour of years
was telling a fearsome tale.
I stood, trying to fell
whether or not
there ever was anything there.*

*Next morning
he got up late.
He asked for tea
- in the same godlike style.
He had no idea
that all was not well*

Love

*It was a net
and I was not water
that could run through, escape.
It was a fraud
which I,
to escape
from myself,
had, with many more idols,
sculpted
within me.*

Security

*Planting a small sapling
he set up around it
a fence
of thorny branches.*

*The sapling was to blame.
It grew.
What could she thorns do
but pierce it?*